सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

वर्ष ४] १ मार्च सन् १९४३ [अङ्क ३

उलझन की घड़ी में

[श्री० ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी]

मुझ को यह क्या हुआ ! आह ! मैंने क्यों मन्दिर आना छोड़ा ?
अपने प्रभु के चरणों पर श्रद्धा के फूल चढ़ाना छोड़ा॥
मेरी ममता की दुनियाँ में किसने यह विद्रोह जमाया ?
मेरी कोमलता को किसने यूं निर्मम पाषाण बनाया ?

मैंने मन्दिर में अबला की जब अस्मत को लुटते देखा।
जिन दिन मानव के हाथों मानवता का दम घुटते देखा॥
मैंने देखा है पापी को प्रासादों मे मौज उड़ाते।
और पुण्य को दरवाजे पर सूखी रोटी को चिल्लाते॥
मैंने देखा आडम्बर को प्रभु के सन्मुख आँखें मींचे।
श्रद्धा जब दर्शन की प्यासी रोती थी सीढ़ी के नीचे॥
मुल्ला रब के लिए कराता जब था मस्जिद में कुर्बानी।
तड़प रही थी तब मानवता 'मानव! मानव! पानी! पानी॥'
डोल उठा ईमान उसी दिन अगर वहाँ पर ईश्वर होता।
मानवता की कुर्बानी पर तब क्या उसका हृदय न रोता॥
प्रभु के आसन पर मानव की, प्राण प्रतिष्ठा आडम्बर की।
मन्दिर—मस्जिद में होती है अब पूजा मद की—मत्सर की॥
तड़प रहा प्रभु का प्यारा जब भूखा खेतों खलिहानों में—।
ढूँढ़ रहा फिर मानव उसको तब क्यों गूंगे पाषाणों में॥

उतर स्वर्ग से भूमण्डल पर 'सत्' की अमरज्योति आती है।
वेणु बजाती सत्य-प्रेम की, सुमधुर न्याय गान गाती है।

मथुरा. १ मार्च सन् १९४३ ई०

ईश्वर की भक्ति।

जिसको अपने पर विश्वास नहीं वह ईश्वर पर विश्वास नहीं कर सकता। ऐसे आत्म-घातियों को अपने पाप का परिणाम भोगने के लिये ईश्वर छोड़ देता है और वह धैर्य पूर्वक तब तक उसकी कुछ मदद न करने के लिए ठहरा रहता है, जब तक कि वह आत्म-घात करना न छोड़ दे। माता तब तक बच्चे को निर्दयता पूर्वक धूप में खड़ा रहने देती है जब तक कि वह फिर चोरी न करने की प्रतिज्ञा नहीं करता। भक्त का प्रथम लक्षण आत्म-विश्वास है। आत्म-विश्वास का अर्थ है परमात्मा में विश्वास करना। जो आत्मा के सच्चिदानन्द स्वरूप की झांकी करता है वही प्रभु के निकट तक पहुँच सकता है। ईश्वर नामक सर्व व्यापक सत्ता में प्रवेश करने का द्वार आत्मा में होकर है, यही इस खाई का पुल है। अन्य उपायों से प्रभु को प्राप्त करने वालों का प्रयत्न ऐसा है जैसे पुल का तिरस्कार करके गहरी नदी का कोई और मार्ग तलाश करते फिरना। आचार्यों का अनुभव है कि—"दैवोपि दुर्वल घातकः" देव भी दुर्वलों का घातक है। अविश्वासी और आत्म-घाती निश्चय ही विपत्ति में पड़े रहते हैं और बिना पतवार के जहाज की तरह इधर उधर टकराते हुए जीवन को निरुद्देश्य नष्ट करते रहते हैं। एक क्रूर कर्ता अपराधी की अर्ज़ की जैसे निष्पक्ष जज कुछ सुनवाई नहीं करता और सरसरी में खारिज कर देता है वैसे ही आत्म तिरस्कार करने वालों को ईश्वर के यहां भी तिरस्कार प्राप्त होता है और उनकी प्रार्थना निष्फल चली जाती है।

ईश्वर से की गई प्रार्थना का तभी उत्तर मिलता है जब हम अपनी शक्तियों को काममें लावें। आलस्य,प्रमाद, अकर्मण्यता और अज्ञान यह सब गुण यदि मिल जांय तो मनुष्य की दशा वह हो जाती है जैसे कि किसी कागज के थैले के अन्दर तेजाब भर दिया जाय। ऐसा थैला अधिक समय तक न ठहर सकेगा और बहुत जल्द गल कर नष्ट हो जायगा। ईश्वरीय नियम, बुद्धिमान माली के सदृश है, वह निकम्मे घास कूड़े को उखाड़ कर फेंक देता है और योग्य पौदों की भरपूर साज सँभाल रखकर उन्हें उन्नत बनाता है, जिस खेत में निकम्मे खर पतवार उग पड़ें उसमें अन्न की फसल मारी जायगी, भला ऐसे किसान की कौन प्रशंसा करेगा, जो अपने खेत की ऐसी दुर्दशा कराता है। निश्चय ही ईश्वरीय नियम निकम्मे पदार्थों की गन्दगी हटाते रहते हैं, ताकि सृष्टि का सौन्दर्य नष्ट न होने पावे। यह कहावत बिलकुल सच है कि–ईश्वर उसकी मदद करता है जो खुद अपनी मदद करता है, अपने पैरों पर खड़ा होने वाले को पीठ थपथपाने वाले दूसरे लोग भी मिल जाते हैं।

प्रार्थना का सच्चा उत्तर पाने का सब से प्रथम मार्ग आत्म विश्वास है। आत्म विश्वासी शरीर और मन से भरपूर प्रयत्न करता है। कर्तव्य परायणता द्वारा ही सच्ची प्रार्थना होनी सम्भव है। तैरने वाला ही समुद्र के गहरे जल में डुबकी लगा कर तली में से मोती ढूंढ़ ला सकता है। जो पानी को देखकर जी चुराता है, उसके लिए मोती पाना तो दूर तैरने का आनन्द लेना भी कठिन है। समय को बर्बाद करने वाले, काम से जी चुराने वाले, अज्ञानी और इन्द्रिय परायण लोग भक्त नहीं हो सकते, चाहे वे कितना ही ढोंग क्यों न रचते हों, ऐसे लोग ईश्वर के नाम पर भिक्षा मांग कर पेट भर सकते हैं। प्रार्थना नहीं कर सकते। प्रमाद और प्रेम यह दोनों तो एक दूसरे के विरोधी तत्व हैं जहां एक होगा वहां दूसरा ठहर नहीं सकता।

आज देखते हैं कि असंख्य मनुष्य ईश्वर पूजा का कर्म-काण्ड करते हैं पर उन्हें रत्ती भर भी लाभ नहीं होता। कारण यह है कि वे प्रथम, आत्मा को जानने का कष्ट नहीं करते और व्यर्थ की तोता रटन्त में अपना समय बर्बाद करते हैं।

सच्चा भक्त अपनी आत्मा के दिव्य मन्दिर में परमात्मा का निरन्तर दर्शन करता है। ईश्वर उसके बिल्कुल निकट है। अपने दिलदार को दिल में छिपाये हुए वह निहाल बना रहता है। प्रभु का पावन चित्र उसके हृदय पर अङ्कित होता है। वह व्यर्थ की उलझनों में नहीं पड़ता वरन् अनुभव करता है कि—"दिलके आइने में है तस्वीरे यार, जब जरा गर्दन उठाई देखली।" वह ईश्वरीय प्रेमका दिव्य समुद्र अपने चारों ओर लहराता हुआ देखता है और उसमें आनन्द के गोते लगाता है। ऐसे ईश्वर परायण भक्त की आन्तरिक ज्योति उसके बाहरी आचरण में स्पष्ट दिखाई देने लगती है। अपने को आत्म भाव से देखने वाला, ईश्वरीय अखण्ड ज्योति के प्रत्यक्ष दर्शन करने वाला, मनुष्य महात्मा—बन जाता है। वह तुच्छ स्वार्थों और इन्द्रिय लालसाओं में वशीभूत होकर दुष्कर्म नहीं करता। पवित्रता और प्रेम की अजस्र धारा उसके आचरणों में से निर्झरिणी की तरह झरती है, उसके लिए अमुक विधि से प्रार्थना करने की बाधा नहीं रहती। चाहे जिस तरीके से और चाहे जब वह प्रार्थना करता रह सकता है, उसकी हर एक पुकार प्रभावशाली होती है और निश्चित परिणाम उपस्थित करने की पूर्ण सामर्थ्य रखती है।

ब्रह्म कैसा है ?

(महामना मदनमोहनजी मालवीय)

ब्रह्म का पूर्ण और अत्यन्त हृदय ग्राही निरूपण, वेद, उपनिषद् और पुराणों का सारांश, भागवत के एकादश स्कन्ध के तीसरे अध्याय में किया हुआ है।

राजा जनक ने ऋषियों से पूछा—हे ऋषिगण! आप लोग ब्रह्म ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं। अतएव आप मुझे यह बताइये कि जिनको नारायण कहते हैं, उन परब्रह्म परमात्मा का ठीक स्वरूप क्या है ?

पिप्पलायन ऋषि ने उत्तर दिया—हे नृप! जो इस विश्व के सृजन, पालन और संहार का कारण है, परन्तु स्वयं जिसका कोई कारण नहीं है, जो स्वप्न, जागरण और गहरी नींद की दशाओं में भीतर और बाहर भी वर्तमान रहता है। देह, इन्द्रियां, प्राण और हृदय आदि जिससे संजीवित होकर अर्थात् प्राण पाकर अपने-अपने कार्य में प्रवृत्त होते हैं, उसी परम तत्व को नारायण जानो। जैसे चिनगारियां अग्नि में प्रवेश नहीं पासकतीं वैसे ही मन, वाणी, आंखें, बुद्धि, प्राण और इन्द्रियां उस परम तत्व का ज्ञान ग्रहण करने में असमर्थ हैं और वहां तक पहुँच न सकने के कारण उसका निरूपण नहीं कर सकतीं।

वह परमात्मा कभी जन्मा नहीं, न वह कभी मरेगा, न वह कभी बढ़ता है और न घटता है। जन्म मरण आदि से रहित वह सब बदलती हुई अवस्थाओं का साक्षी है एवं सर्वत्र व्याप्त है, सब काल में रहा है और रहेगा, अविनाशी है और ज्ञान मात्र है। जैसे प्राण एक है तो भी इन्द्रियों के भिन्न होने से आंखें देखती हैं, कान सुनते हैं, नाक सूंघती है, इत्यादि भावों के कारण एक दूसरे से भिन्न प्रतीत होते हैं, ऐसे ही आत्मा एक होने पर भी भिन्न-भिन्न देहों में अवस्थित होने के कारण भिन्न प्रतीत होता है।

दुःख की तात्विक खोज।

(ले०—विद्याभूषण पं० मोहन शर्मा, विशारद,
पूर्व सम्पादक "मोहनी")

हमारे आर्ष ग्रंथों में मानव जीवन का मुख्य ध्येय सुख शान्ति की प्राप्ति करना बताया है, किन्तु आज के युग में सैकड़ों हजारों में कुछ मनुष्य ही ऐसे निकलेंगे जिन्हें वास्तविक सुख शान्ति प्राप्त हुई। इसका मूल कारण यही जान पड़ता है कि सुख प्राप्त करने के सार भूत पदार्थ दुःख को, मानव ने ठीक ठीक नहीं जाना। यथार्थ में दुःख का तत्व-ज्ञान ही सुख शांति उपलब्ध करने की कुञ्जी है। सुख सूर्य के पुण्य प्रकाश का सेवन करने के पूर्व दुःख की अन्धकारमय बीथियों में निरावलम्ब भटकना होता है, मनुष्य का विवेक और कर्म शक्ति तब कठिन परीक्षा के लिये कसौटी पर रख दिये जाते हैं। अतएव, कहना पड़ेगा कि दुःख यथार्थ रूप से पुरुषत्व विकासी है और इसका सेवन वीर वृत्ती पुरुषसिंह ही कर सकते हैं। दूसरी दृष्टि में कापुरुष और क्लीव हृदयों का दुःख एक अचिकित्स्य और लाइलाज़ मर्ज़ है, क्योंकि वे अपनी दुर्बलताओं और आदतों की गुलामी के कारण वर्षों, इस दलदल से निकल भागने में समर्थ नहीं होते। उनका स्वभाव दुःख का स्वभाव बन जाने के कारण वे सदैव दुःख ही दुःख चिल्लाया करते हैं। उनकी अपने आत्म बल के विकास में आसक्ति नहीं रहती। ऐसे ही आलस्य-जीवियों को दुःख की तात्विक खोज में नितान्त अनाड़ी और मूर्ख कह सकते हैं।

सुख की वास्तविक प्राप्ति के लिये आवश्यकता है कि दुख का बराबर पीछा किया जाय। जिस प्रकार गर्म जल में हाथ डालने के बाद ठण्डे और शीतल जल में हाथ डालने से अपूर्व विश्राम और आनन्द का अनुभव होता है अथवा जिस भांति धूप से जलते हुए रेगपथ में निरावृत पांवों से यात्रा करने के बाद वृक्ष की शीतल और घनीभूत छाया में आश्रय लेने से असाधारण सुख, शांति प्राप्त होती है। उसी प्रकार दुःख की लम्बी दौड़ समाप्त होने पर सुख, मनुष्य के स्वागतार्थ सामने हाथ जोड़े खड़ा रहता है। यदि भावना और मनोवृत्ति से मनुष्य अपने को दृढ़तर बना ले तो दुखमय प्रसङ्गों की कटुता भान तक नहीं हो सकता। कार्लाइल कहता है—सब तरह के दुःख के अनुभव से हम लोगों को पूरा होना है। जब तक दुःख नहीं जान पड़ता, मनुष्य अधूरा रहता है। ज्यों २ विपत्ति पड़ती है त्यों २ पूरा होता है।"

जिन देशों के मनुष्यों ने कठिन और असम्भव कार्यों की साधना के लिये दुःख में सहिष्णुता और संयम को नहीं खोया उन्होंने अपने देश का मस्तक उठाने के साथ साथ समग्र पृथ्वी तक को गौरवान्वित किया है। दुःख की तपस्या किसी अवस्था विशेष के लिये ही प्रयोजनीय नहीं है अपितु आयु के हर भाग में दुःख हमें चुनौती देता हुआ आता है। उसे इसकी चिन्ता नहीं होती कि हमारी शक्तियाँ बराबर काम कर रही हैं या उनमें कोई घाटा भी आगया है? प्रसिद्ध कवि इमर्सन का कथन है कि—"उच्च अवस्था में आचरण व स्वभाव की शुद्धि तथा उन्नति के लिये दुःख का होना आवश्यक है।" जगत् के बड़े बड़े प्रसिद्ध पुरुष ऐसे हुए हैं, जिन्होंने पहिले अत्यन्त दुःख व कष्ट सहे और फिर जगद्विख्यात गुरु, महात्मा और सुप्रसिद्ध महापुरुष हुए। बिना दुःख के कोई उत्तम आदर्श आचरण का हो नहीं सकता, बल्कि, जगत् प्रसिद्ध (भगवान् रामचन्द्र, कृष्ण, बुद्ध ईसा मसीह और गुरु नामक इत्यादि) अनेक महात्मागण, महात्मा ही तब बने, जब कि उन्होंने पहिले आनन्दपूर्वक दुःख सहा। दुःख हम में दया, नम्रता, क्षमा, स्वार्थ त्याग व दानशीलता

का भाव, आत्म विश्वास, आत्म सम्मान और आचरण बल उत्पन्न करता है। इस लिये दुःख की आगे चलकर भी आवश्यकता होती है।" सब लोग यही चाहते हैं कि दुःखों से छुटकारा मिले पर उनके वास्तविक महत्व और उपयोगिता पर किसी का ध्यान नहीं होता। कई तो दुःख की भट्टी में पड़कर कुन्दन बनकर निकलने के बजाय अपने मानस बल पर मलिनता का ऐसा सख्त परदा डाल देते हैं कि सुख के सुखद और अमूल्य क्षणों में भी उन्हें दुःख की मनहूस और सूनी घड़ियों का ही भान हुआ करता है। ऐसे भीरु और संशयालु मनुष्य अपने आपके शत्रु होने के साथ २ दूसरों पर भी अपने इस रोग की बुरी छाप डालते हैं।

दुःख की तीव्र अनुभूति मनुष्य को ईश्वर के समीप्य में ला उपस्थित करती है। तब जीवन का अन्धकारावृत मार्ग एकाएक प्रकाश से जगमगा उठता है। सारी कठिनाइयां विघ्न बाधाएँ तूल की भाँति वायु के प्रचण्ड प्रवाह में देखते २ विलुप्त हो जाती हैं और सुख साम्राज्य हमारे द्वार को खटखटाने लगता है। अतः दुख की चरम उपलब्धि का ही दूसरा नाम सुख है। हम चाहते हैं कि सुख प्राप्त करें तो दुःखों से साक्षात्कार होने पर हमें उसका सुख से भी कहीं अधिक स्वागत करना चाहिये। दुःख को ईश्वर का स्मरण केन्द्रीय पदार्थ माना है। सुख और ऐश्वर्य में मनुष्य कृपालु जगदीश्वर के स्मरण और भजन से पराङ्मुख होकर नाना विलास-वासनाओं में फँसा जाता है। पर दुख में ऐसा नहीं होता। क्षण २ मनुष्य भक्त भयहारी भगवान् को तन्मयता से पुकारता है। कवि ने इन घड़ियों की महत्ता आंकते हुए ठीक ही कहा है:—

सुख के माथे सिल परे, नाम हृदय से जाय।
बलिहारी वा दुःख की, पल पल नाम रटाय॥

झूठा वैराग्य

[श्री० स्वामी विवेकानन्द जी]

कितने ऐसे मनुष्य हैं जो संसार के किसी पदार्थ से प्रेम नहीं करते, उनके भीतर किसी भी मौलिक वस्तु के प्रति सद्भाव नहीं होता। वे निर्दय, निर्मम निष्ठुर होते हैं। निस्संदेह वे अनेक प्रकार की कठिनाइयों से, मुसीबतों से, बच जाते हैं, किन्तु वैसे तो निर्जीव पत्थर की चट्टान को भी कोई शोक नहीं होता, कोई वेदना नहीं होती, लेकिन क्या हम सजीव मनुष्य की तुलना पत्थर कर सकते हैं? जो वज्रवत् कठोर हृदय होते हैं, नितान्त एकाकी होते हैं वे चाहे कष्ट न भोगें पर जीवन के बहुत से आनन्दों का उपभोग करने से वे वञ्चित रह जाते हैं। ऐसा जीवन भी भला कोई जीवन है? वैरागी वह है जो सब प्रकार से संसार में रह कर, सब तरह के कार्यक्रम को पूराकर,सब की सेवा कर, सबसे प्रेम कर, फिर भी सबसे अलग रहता है।

हम लोगों की यह एक विचित्र आदत सी पड़ गई है कि जो भी दुष्परिणाम हमको भोगने पड़ते हैं,जो भी कठिनाइयाँ आपत्तियां हमारे सामने आती हैं, उनके लिए हम अपने को दोषी न समझ कर दूसरे के सर दोष मढ़ दिया करते हैं। संसार बुरा है, नारकीय है, भले लोगों के रहने की यह जगह नहीं है,यह हम लोग मुसीबत के समय कहा करते हैं यदि संसार ही बुरा होता और हम अच्छे होते तो भला हमारा जन्म ही यहाँ क्यों होता? यदि थोड़ा सा भी आप विचार करो तो तुरन्त विदित होजावेगा कि यदि हम स्वयं स्वार्थी न होते तो स्वार्थियों की दुनियाँ में आपका वास असंभव था। हम बुरे हैं तो संसार भी बुरा प्रतीत होगा लेकिन लोग वैराग्य को झूठा ढोल पीटकर अपने को अच्छा और संसार को बुरा बताने की आत्म वंचना किया करते हैं।

सबसे बड़ी दौलत

[महात्मा सुकरात]

सब लोग धन सम्पदा, मान, ऐश्वर्य आदि की हवस करके उनके पाने के लिए परिश्रम करते हैं, परन्तु मुझे किसी मित्र के समागम का लाभ होने से जितना सन्तोष होगा, उतना उन सब चीज़ों के मिलकर प्राप्त होने पर भी नहीं होगा। लोग अपनी मिलकियत का हिसाब किताब रखते हैं पर यदि उनसे पूछा जाय कि तुम्हारे कितने सच्चे मित्र हैं? तो शायद वे इसका ठीक ठीक उत्तर न दे सकेंगे। लोग समझते हैं कि पैसा और जायदाद ही सम्पत्ति है, किन्तु मेरा विचार है कि सच्चे मित्रों की तुलना हीरों का खजाना भी नहीं कर सकता। दूसरी चीज़ों की उपयोगिता और कीमत के बारे में दो रायें हो सकती हैं पर सच्चे मित्रों का बेश कीमती होना निर्विवाद है। छोटे बड़े और अक्लमन्द बेवकूफ हर कोई यह मानते हैं कि वफादार और बुद्धिमान दोस्त इस दुनियाँ की बेश कीमती नियामत है।

जमीन जायदाद को खरीदते बेचते समय उसके गुण दोष और हानि लाभ पर नजर डालली जाती है, क्या ही अच्छा हो अगर लोग मित्रता कायम करते वक्त उनके स्वभाव सदाचार, चरित्र, वफादारी और ईमानदारी को परख लिया करें। देखा जाता है कि किसी मामूली घटना को लेकर दो व्यक्ति मित्र बन जाते हैं और कुछ दिनों बड़े जोश खरोश से उनकी दोस्ती चलती है, परन्तु चंद ही दिन बाद उपेक्षा या द्वेष भाव का बीजारोपण हो जाता है। यह चुनाव की भूल है। मैं अपने मित्र बढ़ाने की फिक्र में रहता हूँ, पर बहुत सोच विचार कर किसी से घनिष्टता बढ़ाता हूं। मेरे थोड़े से मित्र हैं पर जो हैं वे सच्चे हैं। इस दुनियां की ...लतों का महत्व मैंने भली प्रकार आंका है पर ...से बुढ़ापे तक के अनुभवों ने मुझे यही सिखाया है कि सच्चे मित्र से बढ़कर और कोई दौलत इस ज़मीन के पर्दे पर नहीं है।

ब्रह्मचर्य-पालन।

[महात्मा गान्धी]

ब्रह्मचर्य पालन करने के सम्बन्ध में कुछ सीधे साधे नियम बताता हूँ। यह मेरे तथा मेरे साथियों के अनुभव किये हुए हैं।

(१) लड़के लड़कियों का पालन सीधे साधे और प्राकृतिक रूप से यह पूरा विश्वास रख कर करना चाहिए कि वे पवित्र हैं और पवित्र रह सकते हैं।

(२) अचार चटनी या मिर्च मसाले जैसे गर्म और उत्तेजक आहारों तथा मिठाई और तले भुने हुए चिकने व भारी पदार्थों से सब किसी को परहेज करना चाहिए।

(३) पति पत्नी को अलग अलग कमरों में रहना चाहिए और एकान्त से बचना चाहिए।

(४) शरीर और मन दोनों को बराबर अच्छे कामों में लगाये रहना चाहिए।

(५) जल्दी सोने और जल्दी उठने के नियम की सख्त पावन्दी होनी चाहिए।

(६) बुरे साहित्य से बचना चाहिए। बुरे विचारों की दवा भले विचार हैं।

(७) विकारों को उत्तेजना देने वाले थियेटर सिनेमा नाटक तमाशों से बचना चाहिए।

(८) स्वप्नदोष से घबराने की ज़रूरत नहीं है। साधारण बलवान आदमी के लिए हर बार ठंडे पानी से स्नान कर लेना ही इसका सबसे अच्छा इलाज़ है। यह कहना ग़लती है कि स्वप्न दोष से बचने के लिए कभी कभी संभोग कर लेना चाहिए।

(९) सबसे बड़ी बात तो यह है कि पति पत्नी तक के बीच में ब्रह्मचर्य को कोई असंभव या कठिन न मानलें। इसके विपरीत ब्रह्मचर्य को जीवन का स्वाभाविक और साधारण अभ्यास समझना होगा।

(१०) प्रति दिन सच्चे दिल से पवित्रता के लिए प्रार्थना करने से आदमी दिनों दिन पवित्र होता है।

आत्मवत् सर्व भूतेषु ।

(श्री० श्री प्रकाश जी एम० एल० ए०)

यदि हम अपने से चन्द सवाल पूछें और जो उत्तर उन सवालों का हम दूसरों के लिए दें, उन्हें ही अपने ऊपर लागू करें तो हमें सच्चे नागरिक बनने में देर न लगे। यदि मुझ से कोई वस्तु मँगनी ले जाय तो मैं यह चाहता हूँ या नहीं, कि वह वापिस मिल जाय और वैसी ही अच्छी हालत में जिस हालत में मैंने दी थी ? यदि मुझसे किसी ने कोई वायदा किया है तो मैं चाहता हूं या नहीं, कि वह ठीक तरह से समय पर उसे पूरा करो ? यदि मैं सड़क पर चलता हूं तो मैं चाहता हूँ या नहीं, कि किसी के फेंके हुए केले के छिलके से मैं फिसल न पड़ूं और यदि फिसल पड़ूं तो कोई मेरी सहायता कर मुझे उठादे और मेरी फिकर करे न कि मेरा उपहास ? मैं चाहता हूं या नहीं, कि यदि मेरा बच्चा कहीं रास्ता भूल गया हो तो उसे कोई मेरे घर पहुँचादे और उसे इधर उधर भटकता न छोड़दे ? यदि मैं किसी सभा में जा रहा हूं, तो मैं चाहता हूं या नहीं, कि लोग इस प्रकार बैठे हों, कि मुझे भीतर जाकर बैठने की जगह हो और व्यर्थ एक तरफ भीड़ और दूसरी तरफ कुर्सियां खाली न हों ? यदि किसी के घर मेरा निमन्त्रण है तो मैं चाहता हूं या नहीं, कि मेरे पहिले पहुंचने वाले लोगों ने जूता इस तरह उतारा हो कि मुझे भी अपने जूतों को रखने की जगह मिल जाय ? थोड़े में यदि हम सदा यह याद रखें, कि जो हम दूसरों से अपने लिए चाहते हैं, वही दूसरे हम से चाहते हैं, जिससे उन्हें भी आराम और आशाइश मिले और यदि हम उसी के अनुसार कार्य करें तो हम सच्चे और अच्छे नागरिक फौरन बन सकते हैं । चाहे हम कितने ही छोटे आदमी क्यों न हों, हम भी काफी हिस्सा देश के लिए सच्चा स्वराज्य प्राप्त करने में ले सकते हैं ।

× × ×

प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है, कि वह आशा रखे कि उसके प्रति जो समुचित कर्तव्य दूसरों का है, वे उसका पालन करेंगे । जब हम सड़क पर चलते है, तो हमें इसका अधिकार है, कि हमको समुचित सुविधा अन्य सब चलने वालों से मिले। पर हमको सदा यह भय लगा रहता है, कि हम पर कोई अपने मकान के ऊपर से कूड़ा फेंक देगा, कोई केले का छिलका इस तरह से फेंकेगा, कि हम उस पर से फिसल कर गिर जायेंगे, कोई साहब आगे से छाता इस तरह से कन्धे पर रखकर चलते होंगे, कि हमारी आँख में उसकी नोंक चुभ जायगी। ऐसा ही भय हम से अन्य भाइयों को रहता है। मेरी तो दृढ़ भावना है, कि जो केले का छिलका सड़क पर फेंकता है, या ठीक तरह से छाता लेकर नहीं चलता, वह स्वराज्य के रास्ते में रोड़ा अटकाता है और स्वराज्य के आने में देर कराता है। रेल पर चलने वालों का भी यही अनुभव है, कि खिड़की के बाहर न थूक कर लोग डब्बे के भीतर थूकते हैं, खाने पीने के सकोरे पत्तल बाहर न फेंक, भीतर ही छोड़ देते हैं, जिससे दूसरे मुसाफिरों को तकलीफ होती है। जगह रहते भी रात को जो मुसाफिर गाड़ी में आते हैं, वे व्यर्थ ही इतना शोर मचाते हैं, दरवाजा इतने जोर से खोलते बन्द करते हैं, कि दूसरों को बे मतलब कष्ट पहुँचता है । कोई किसी को भीतर नहीं आने देता, आये हुए लोगों को बैठने नहीं देता, स्वयं उतरते समय दरवाजा खुला छोड़ जाता है । यदि हम केवल यह छोटा सा उसूल सदा याद रखें, कि हमें भी दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करना चाहिए जैसा हम चाहते हैं, कि दूसरे हमारे साथ करें, तो हम ऐसी भूल न करेंगे जिसके कारण हम भरोसे के योग्य नहीं रह जाते।

—ग्रहस्थ गीता

परिश्रम के दो पहलू।

(जेम्स ऐलन)

अर्थ शास्त्र ने धन कमाने का प्रथम साधन परिश्रम को माना है। इसी प्रकार कर्म योग में कर्तव्य को, आचार शास्त्र में सेवा को, समाज शास्त्र में पौरुष को और आरोग्य शास्त्र में व्यायाम को प्रधानता दी गई है। वस्तुतः 'परिश्रम' जीवन का मेरु दंड है, जिसमें होकर आनन्द, उन्नति, ऐश्वर्य, और सफलता की रक्त वाहिनी नाड़ियाँ प्रवाहित होती हैं। बिना परिश्रम किये कोई भी व्यक्ति महत्व को प्राप्त नहीं कर सकता।

परिश्रम दो प्रकार का है शारीरिक और मानसिक। जिस प्रकार दो पहियों से मिलकर एक गाड़ी बनती है, उसी प्रकार दोनों ही परिश्रमों से जीवन में प्रगति का संचार होता है। अकेला शारीरिक परिश्रम करने वाले मजूर पेट भरने योग्य अन्न ही उपार्जित कर सकते हैं। इसी प्रकार खयाली पुलाव पकाने वाले लोग भी जूतियाँ चटकाते फिरते हैं। विचार और कार्य, शारीरिक श्रम और मानसिक श्रम, जब यह दोनों ही मिल जाते हैं तो उद्देश्य की प्राप्ति बहुत सरल हो जाती है। मजदूर श्रेणी के लोगों को चाहिए कि वे अपनी ज्ञान वृद्धि के लिए, शिक्षा के लिए, सत्संग के लिए, कुछ समय निकालें और अपने पेशे में बुद्धि का समन्वय करके उसे लाभप्रद एवं गौरवशाली बना डालें। इसी प्रकार विचारक श्रेणी के बुद्धि जीवी लोगों को चाहिए, कि वे गद्दे तकियों पर पड़ा रहना और मोटर गाड़ियों में लदे फिरना छोड़कर शारीरिक परिश्रम में दिलचस्पी लेना आरम्भ करें। भारतीय अमीरों और विद्वानों को इस सम्बन्ध में अंग्रेजों से शिक्षा लेनी चाहिए, जो कितने ही बड़े हो जाने पर भी शारीरिक परिश्रम को बहुत दिलचस्पी के साथ अपनाते हैं और अपना आनन्ददायक स्वास्थ्य बनाये रहते हैं।

स्मरण रखिए शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के परिश्रमों के मिलने से एक ऐसी शक्ति उत्पन्न होती है जिसे आनन्द और उन्नति का माता कहना चाहिए।

कथा—

नारायणास्त्र का निवारण

महाभारत के युद्ध में अश्वत्थामा ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर भीम को मारने के लिए नारायणास्त्र का प्रहार किया। वह अस्त्र बड़ा ही प्रचंड था, उसकी उष्णता असहनीय थी, तरकश में से निकलते ही वह चारों ओर अग्नि बरसाने लगा, सब लोग उससे जलने लगे और कर इधर-उधर भागने लगे।

अश्वत्थामा का छोड़ा हुआ नारायणास्त्र भीम की ओर चलने लगा। भीम भी कोई झुकने वाले थोड़े ही थे। वे भी हुंकार देते हुए उस अस्त्र का मुकाबिला करने के लिए आगे बढ़े और गर्जना करते हुए ललकारने लगे.

भगवान् कृष्ण ने यह सब दृश्य देखा तो उन्होंने समझा कि इससे तो भीम को आहत होना पड़ेगा। वे अर्जुन का रथ छोड़कर भीम के पास पहुँचे और उनके सारे हथियार छीन लिए। जब भीम बिना हथियार होगये तो नारायणास्त्र ठंडा होगया और उनका कुछ भी बिगाड़ सका। नारायणास्त्र उन्हीं पर चोट करता है, जो मुकाबिले में शस्त्र धारण किये हुए हों। कृष्ण इस मर्म को जानते थे, इससे उन्होंने यह उपाय किया और भीम के प्राण बचा लिये।

\+ \+ \+

पाजी व्यक्तियों की कटु वाणी नारायणास्त्र है। देखा जाता है, कि वे लगाम और मुँह फट कमीने, दूसरों की महानता का कुछ भी ध्यान न करते हुए अपने पेट की गन्दगी को मुँह के रास्ते उगल देते हैं। ऐसे अवसर आने पर उनसे मुँहजोरी नहीं करनी चाहिए। उस समय नाली में ईंट पटकने से अपने ऊपर ही छींटे आ सकते हैं। आपको कभी ऐसे किसी कमीने की हरकत का सामना करना पड़े तो उस समय चुप हो जाइए और पीछे मौका आने पर उसकी अकल को दुरुस्त कर देना चाहिए। यही नारायणास्त्र के निवारण का मर्म है।

स्वास्थ्य और व्यायाम ।

(पं० जवाहरलाल नेहरू)

शरीर से मैं सुखी हूँ, ऐसा कहने में कोई हर्ज नहीं। कांग्रेस के अनेक तरह के कामों से मैं इतना ज्यादा थक जाता था कि मेरा जी होता, कब मैं थोड़ा सा आराम कर सकूं लेकिन ज्यादा काम करने की वजह से मेरी तन्दुरुस्ती पर कोई बुरा असर कभी नहीं पड़ा। तन्दुरुस्ती ठीक रखने के लिए मैं बहुत सावधान रहता हूँ। रोज कसरत करता हूँ। सादा और हल्का खाना खाता हूँ। खुली हवा में टहलने जाता हूँ। मन को शान्त रखता हूँ। तन्दुरुस्ती के मामूली से मामूली कायदों की भी पाबंदी करता हूँ। ज्यादा खाना नहीं खाता। मांसाहार नहीं करता।

सूर्य नमस्कार करना मुझे बहुत अच्छा लगता है। सन् १९३२ में मैं जेल में था। उस समय मेरी तबियत खराब हुई। कुछ दिनों बुखार आया, लेकिन स्वभावतः मेरी तबियत ठीक होगई। जाड़े के दिनों में सबेरे मैं कितनी ही देर तक धूप में बैठा रहता। इस धूप में बैठने से मुझे फायदा हुआ। जेल में मेरे भाई-बन्द जब गरम ओवरकोट और कंबल ओढ़कर कोठरियों में घुसे रहते, तब मैं नंगे बदन जेल के बरामदे में चहल कदमी किया करता।

तरह २ की कसरतों में मुझे शीर्षासन बहुत अच्छा लगता है। नियम से शीर्षासन करते रहने से बदन में फुर्ती रहती है ऐसा मैंने अनुभव किया है। रोज कसरत करने से कभी नींद की इंतजारी नहीं करनी पड़ती। सिर दर्द किसे कहते हैं यह मैं आज तक नहीं जानता। अचरज की बात तो यह है कि मैं दिन दिन भर इतना काम करता हूँ, पढ़ता लिखता हूँ फिर भी मेरी आँखें ठीक हैं। अब तक मुझे चश्मा पहनने की जरूरत नहीं हुई। मैं रोज कसरत करता हूँ। खुली हवा में टहलने जाता हूँ। सादा और हल्का खाना खाता हूँ। तन्दुरुस्ती के मामूली कायदों की भी पाबन्दी करता हूँ। इसीसे मेरी तन्दुरुस्ती ठीक रहती है। शरीर घोड़े की तरह मजबूत रहता है।

—मेरी कहानी,

सैनिकों की आवश्यकता है !

[श्री० स्वामी शिवानन्द जी]

सुन्दर स्वास्थ्य आपके लिए सबसे बड़ी सम्पत्ति है। स्वास्थ्य ही धन है। निस्संदेह स्वास्थ्य प्राप्त करने योग्य वस्तु है। यह सबके लिए समान रूप से कल्याणकारी है। अगर आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है तो आप जीवन की किसी भी दिशा में अग्रसर नहीं हो सकते।

जिसे शारीरिक मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक बल प्राप्त है वह एक आदर्श व्यक्ति है। शारीरिक बल से नैतिक बल उत्तम है। आध्यात्मिक बल संसार में सर्वश्रेष्ठ है। गांधी जी को नैतिक बल प्राप्त है। उन्होंने इस बल को अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य से प्राप्त किया है। गांधी जी में शारीरिक बल नहीं है तो भी उनमें मानसिक और नैतिक बल मौजूद है। दुबले पतले और कमजोर शरीर के अन्दर भी शक्ति शाली आत्मा का बास हो सकता है।

संसार को सुन्दर स्वास्थ्य वाले माता पिताओं और बालक बालिकाओं की आवश्यकता है, लेकिन इन दिनों हम भारत में क्या देखते हैं ? वह भारत जो किसी समय सुविख्यात वीरों का देश था जहाँ पर अदम्य साहस और अप्रतिम वीरता वाले अगणित योद्धाओं और सरदारों का वास था, वही भारत आज क्षीण और निःशक्त लोगों से भर उठा है। बच्चे, बच्चे पैदा करते हैं। स्वास्थ्य के नियमों की उपेक्षा की जाती है। आज राष्ट्र दुख भोग रहा है और मर रहा है।

इस समय संसार को सच्चे वीरों की—नैतिक, आध्यात्मिक सैनिकों की—आवश्यकता है जिनमें अहिन्सा सत्य, आस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पांचों गुण मौजूद हों, जिन्होंने आत्मज्ञान प्राप्त किया हो। केवल ऐसे ही सच्चे सैनिक संसार को वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त करा सकते हैं।

हिन्दू धर्म, राष्ट्र धर्म है !

(श्री० स्वामी दरबारीलालजी 'सत्यभक्त')

एक बार एक सज्जनने मुझसे कहा—"हिन्दू धर्म कोई धर्म नहीं है क्यों कि न तो कोई उसका निश्चित देवताहै, न उसका कोई निश्चित विचार।" मैंने कहा—"हिन्दूधर्म कोई संकुचित धर्म नहीं है वह धर्मों का अजायब घर है, अनेक दर्शन, अनेक आचार विचार, ईश्वर के अनेक रूप, जिसमें समन्वित हैं और जिसमें हर एक को जगह मिल सकती है।"

बात यह है कि यह एक राष्ट्र का धर्म है। आर्य, शक, हूण आदि जो यहाँ आते गये और यहाँ बसते गये उन सबके साथ इसका आदान प्रदान हुआ और इससे जिस विशाल व्यापक समभावी धर्म की रचना हुई, वह हिन्दू धर्म कहलाया। किसी धर्म को नष्ट करके यह रचना नहीं हुई, किन्तु सब धर्मों को रखकर, उनका समन्वय करके यह रचना हुई। यही कारण है कि संहारक महादेव, विकराल कालीमैया, वैभवशाली विष्णु आदि सभी वृत्ति के सैंकड़ों देव इस धर्म में आगये। ईश्वर के जितने महत्व पूर्ण कार्य इस दुनियां में होते हैं उन सबका प्रतिनिधि एक एक देव बन गया। सभी देव ऋषि आदि ईश्वर के अंश बन गये। इस प्रकार एक ईश्वर को बड़े विशाल रूप में हिन्दुओं ने देखा और सबका समन्वय करके एक राष्ट्रधर्म बनाया।

यह निश्चित है कि इस देश की एक समन्वयात्मक विशाल संस्कृति ही हिन्दू धर्म रहा है। जैन धर्म और बौद्ध धर्म से भी उसने बहुत कुछ लिया है, उन्हें अपनाया हैं, अब इस्लाम और क्रिश्चियनिटी को भी अपनाने की जरूरत है। वह अपना सकता है। वह सर्वधर्म समभाव के आधार पर ही खड़ा हुआ है।

सत्य से सुख

(श्री०लक्ष्मीनारायणसिंह शर्मा, सा.शिरो.बखरी)

आजकल सत्य भाषी को कष्ट उठाना पड़ता है और मिथ्या भाषी पाखंडी धूर्त लोग सुख से जीवन व्यतीत करते हैं, परन्तु जो विचारशील मनुष्य हैं, वे जानते हैं, कि सत्य से प्रथम तो चाहे कष्ट ही क्यों न हो, परन्तु अन्त में अक्षय सुख की प्राप्ति होती है और तद्विपरीत मिथ्याभाषी को तो पहले सुख होता है और अन्त में उसकी दुर्गति होती है। वास्तव में सच्चा सुख वही है जो परिणाम में हित कारक हो। भगवान् श्री कृष्ण, गीता में तीन प्रकार के सुखों की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि जो पहले तो विष की तरह दुःख दायक मालूम होता है, परन्तु पीछे अमृत तुल्य मधुर एवं हितकारी होता है वही सच्चा सात्विक सुख है। ऐसा सुख आत्मा और बुद्धि की प्रसन्नता से उत्पन्न होता है।

अब प्रश्न यह है कि आत्मा की प्रसन्नता का उपाय क्या है? क्या मिथ्याचरण से कभी आत्मा और बुद्धि प्रसन्न हो सकती है। सभी जानते हैं कि पापी मनुष्य की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती, उसका पाप ही उसको खा जाता है। पहले तो वह समझता है कि मैं मिथ्याचरण करके खूब सुखी हूँ पर उसके उसी सुख के अन्दर ऐसा गुप्त विष भरा हुआ है जो किसी न किसी दिन उसका सर्वनाश कर देगा। उस समय उसे स्वर्ग या नरक कहीं भी ठिकाना न रहेगा। इस लिये मिथ्याचरण छोड़ कर मनुष्य को सदैव सत्य का ही बर्ताव करना चाहिये। इसीसे मन और बुद्धि की सच्ची प्रसन्नता प्राप्त होती है और ऐसा सुख प्राप्त होता है जिसका फिर नाश नहीं होता। सब शास्त्रों का सार और सब धर्मों का मूल यही है कि सत्य पर आरूढ़ रहा जाय।

अन्तिम समय के संस्मरण।

(१)

रोम की राज्य सभा के सभापति जुलियस सीजर पर षड़यन्त्रकारियों ने आक्रमण किया। षड़यन्त्रकारी उन पर आघात कर रहे थे। सीजर निरस्त्र थे फिर भी किसी प्रकार अपना बचाव करने का प्रयत्न कर रहे थे। इसी समय उनके परम विश्वासी मित्र ब्रूटस ने भी उन पर आक्रमण किया। अब असह्य होगया। मित्र के विश्वास घात से उनका हृदय फट गया! सीजर ने ब्रूटस की ओर देखकर कहा—"मित्र! तुम भी……"।

सीजर ने अपने बचाव का प्रयत्न छोड़ दिया और आहात होकर मृत्यु की गोद में गिर पड़ा।

(२)

फ्रान्स की महारानी मेरी आंतानेत को विद्रोहियों ने मृत्यु दण्ड दिया। बध शाला के चबूतरे पर चढ़ते समय धोखे से उनका पैर एक कर्मचारी पर पड़ गया। मृत्यु की अन्तिम घड़ी बिलकुल समीप थी फिर भी मेरी ने शिष्टता को नहीं खोया। रानी ने तुरन्त ही उस कर्मचारी से कहा—"महोदय, क्षमा कीजिएगा, ऐसा धोखे से ही होगया।"

(३)

अमेरिका को पराधीनता के पाश से मुक्त कराने वाले जार्ज वाशिङ्गटन रोग शय्या पर पड़े हुए थे। अन्तिम घड़ी आ पहुंची थी तो भी डाक्टर लोग उन्हें आश्वासन दे रहे थे। जार्ज वाशिंगटन ने मरते समय कहा—"मैं जानता हूँ कि मैं मर रहा हूं। मुझे मृत्यु का जरा भी डर नहीं लगता क्योंकि जीवन को सदा ही मैंने मृत्यु के निकट रखा है।"

(४)

सोलहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के राजा ने असंख्य व्यक्तियों को इसलिये जीवित जलवा दिया कि वे उसकी आज्ञानुसार धर्म परिवर्तन करने को रजामन्द न होते थे। उसी सम्बन्ध में सबसे बड़े पादरी क्रेनमर भी पकड़े गये। उन्होंने पहले तो भय के कारण धर्म परिवर्तन की प्रतिज्ञा पर स्वीकृति के हस्ताक्षर कर दिये। पीछे उनमें मनोबल लौट आया और उनने उसे अपनी भूल को घोषित कर दिया। वे जलाये जाने लगे तो उन्होंने अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ा कर जल्लाद से कहा—'पहिले इसे जलाओ, क्योंकि इसी ने वह भूल की थी"

(५)

यूनान के ऋषि सुकरात को अपने सत्यमय विचारों के कारण बन्दी होना पड़ा। उन्हें जहर का प्याला पिलाकर प्राण दंड दिया गया। जब वे मरने लगे तो उन्होंने अपने एक मित्र से कहा—"देखो, मेरे ऊपर चसक्युलेपिस व्यक्ति का एक मुर्गे का दाम बाकी है, सो उसे चुकाना मत भूलना।" यह कह कर वे मर गये।

(६)

भगवान् बुद्ध जब मरने लगे तो उनके शिष्य उन्हें घेर कर रोने लगे। भगवान् ने कहा—"रोओ मत मैं तो सदा से ही यह कहता रहा हूँ कि अपने प्रिय लोगों को छोड़ कर हम सबको जाना है। मेरे लिये मत रोओ, मृत्यु की अनिवार्यता को समझो और उससे आत्म रक्षा का प्रयत्न करो।"

(७)

महाप्रभु ईसामसीह को जब शूली पर चढ़ाया जाने लगा तो उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहा—"हे पिता, इन्हें क्षमा करना, क्योंकि ये न जानते कि ये क्या कर रहे हैं।"

(८)

फ्रांस का नेता दांतों मौत के घाट उतारा गया। तलवार के सामने खड़े होकर उसने बधिक से कहा "लोगों को मेरा कटा हुआ सिर दिखाना और कहना "देखो! बहादुर दांतो का सिर देखो! यह देखने ही योग्य है।"

धर्म शास्त्रों के प्रवचन।

वेद का सन्देश।

माता पिता और अपने सब सम्बन्धियों के कल्याण की इच्छा रखनी चाहिए। तथा सब मनुष्यों का, सब पशु पक्षियों का, सब प्राणियों का और सब जगत् का भला करने की इच्छा करनी चाहिये।

अथर्व १—३१—४

प्रत्येक मनुष्य उत्तम और सच्चे मार्ग पर चले। सचाई से अपने व्यवहार करे और धन ऐश्वर्य आदि प्राप्त करे। कभी किस बुरे मार्ग से कोई भी मनुष्य धन न कमावे। वह परमेश्वर मनुष्यों के सब कर्मों को देखता है और बुराई करने पर कठोर दण्ड देता है।

यजु ४०—१६

भाई अपने भाई के साथ कभी लड़ाई न करे। तथा बहिन अपनी बहिन के साथ भी कभी झगड़ा न करे। भाई बहिन में कभी झगड़ा न हो। सब आपस में मिलजुल कर प्रेम से वर्ताव करें।

अथर्व ३—३०—३

सदा आपस में मिलजुल कर रहो। झगड़ा कभी न करो। सब मिलकर अपना २ कर्तव्य कार्य उत्तम रीति से करते रहो। सदा उत्तम भाषण किया करो। बुरे शब्द का उच्चारण कभी न करो।

अथर्व ३—३०—३

कुरान की शिक्षा।

इसमें संशय नहीं कि मुसलमान, ईसाई, यहूदी और सावी इनमें से जिनका अल्लाह पर विश्वास है, और जो सुकर्म करते रहते हैं उनको उनकी कृति का परिणाम उनके पालनकर्ता की ओर से प्राप्त होगा और उनको न किसी प्रकार का भय होगा और न वे किसी प्रकार शोकग्रस्त होंगे।

सूरये बकर १—११८

और जब कुछ लोग बुरे कर्म करके झट कह देंगे कि हमने तो अपने बाप दादों को इसी प्रकार करते देखा और अल्लाह ने हमको इसके करने की आज्ञा दी है। हे पैगम्बर! तुम इन्हें बतलाओ कि अल्लाह बुरे आचरणों की आज्ञा नहीं देता। अल्लाह पर क्यों ऐसे असत्य आक्षेप लगाते हो। जो तुम्हें ज्ञात नहीं।

सूरये अअराफ २—८—५

उस दिन से डरो जब कि तुम अल्लाह की ओर लौटाकर न लाये जाओगे। फिर प्रत्येक पुरुष को उसके किये का पूरा पूरा बदला दिया जायगा और मनुष्यों पर अत्याचार न होगा।

सूरये बकर १—२—३१—८

जो लोग ईमान लाये और जिन्होंने शुभ कर्म भी किये और प्रार्थना करना जारी रखा और दान देते रहे उनका परिणाम उनके पालनकर्ता की ओर से मिलेगा और न कोई भय होगा और न कोई शोक सन्ताप।

सूरये बकर १—२—३१—९

हे विश्वासियो! यदि तुम पर किसी प्रकार का सङ्कट आपड़े तो उसकी निवृत्ति के निमित्त सन्तोष और प्रार्थना का आश्रय लो निस्सन्देह अल्लाह सन्तोषियों का साथी है।

सूरये बकर १—२—१९

बाइबिल की वाणी।

अपनी जीभ बुराई से रोक रख और अपने मुँह की चौकसी कर कि उससे छल की बात न निकले। बुराई को छोड़ और भलाई कर। मेल को ढूँढ़ और उसका पीछा न छोड़।

भजना संहिता ३४-१३-१५

भगवान बुद्ध के उपदेश

इस संसार में द्वेष द्वेष से शान्त नहीं हो सकता। इसे शान्त करने का उपाय अद्वेष या बैर त्याग है। यह प्राचीन नियम (सनातन धर्म) है।

कई झगड़ने वाले लोग यह अनुभव नहीं करते कि किसी समय हम सबको इस संसार से चल देना है। हाँ, कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इस बात को अनुभव करते हैं। वह अपने झगड़ों का निर्णय कर लेते हैं।

यदि एक पुरुष धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय बहुत करता है, परन्तु उस पर आचरण नहीं करता तो वह एक ऐसे ग्वाले की तरह है जिसका काम केवल दूसरे की गौऐं गिनना है (उसके दूध में उसका कोई भाग नहीं)

जो पुरुष जागता है, वह ऐसे मार्ग पर चलता है जो अमर जीवन की ओर लेजाता है। प्रमाद का मार्ग मृत्यु की ओर लेजाता है। जो जागते हैं वे स्वतंत्र हैं। जो प्रमाद में फँसे हैं वे मानों अभी मर चुके हैं।

जितनी हानि किसी मनुष्य को उससे बैर करने वाला पहुँचा सकता है या जितना दुख उसे उसका शत्रु दे सकता है, उससे अधिक क्लेश उसे उसका अपना मन टेढ़े मार्ग पर चल कर देता है।

जितना लाभ मनुष्य को उसका अपना मन सीधे मार्ग पर चल कर पहुँचा सकता है, उतना उसके माता पिता या बन्धु भी नहीं पहुँचा सकते।

मनुष्य को दूसरों की दुर्बलताओं का ध्यान नहीं करना चाहिए। उसे अपने संबंध में सोचना चाहिए कि उसने कहाँ अनुचित कर्म किया और कहाँ जो करना चाहिए था, नहीं किया।

जिस पुरुष को नींद नहीं आती, उसके लिए रात बहुत लम्बी है। जो बहुत थका है, उसके लिए योजन बहुत लम्बा अन्तर है। अल्प बुद्धि पुरुषों के लिए जिन्हें धर्म का ज्ञान नहीं, संसार चक्र बहुत लम्बा है।

यदि किसी पुरुष को अपने से अच्छा आदमी नहीं मिल सकता, अपने समान भी नहीं मिल सकता तो उसे चाहिए कि अपना समय एकान्त में व्यतीत करे। मूर्ख की संगति से प्रत्येक दशा में बचना चाहिए।

अज्ञानी पुरुष यह चिन्ता करके अपने आपको दुखी करता है कि 'यह मेरा पुत्र है, यह मेरा धन है।' जब वह अपना स्वामी भी आप नहीं तो पुत्र और धन का स्वामी कैसे हो सकता है?

सचाई को समझो।

ईसप की नीति शिक्षा

(१)

किसी देवता के रथ में एक गधा जुता हुआ था। सब लोग रथ के निकट आकर उसे प्रणाम कर रहे थे। गधे ने समझा कि यह सब लोग मेरा ही सम्मान कर रहे हैं। अब तो गधे को बड़ा घमंड हो गया और अपने बड़प्पन की ऐंठ में रथ खींचने से इनकार करने लगा। हाँकने वाले ने उसे पीटते हुए कहा—मूर्ख तू क्यों इतराता है। यह नमस्कार तो रथ में विराजी हुई मूर्ति के लिए किये जारहे हैं तू तो गधे का गधा का ही रहेगा।

पूजनीय तो आत्मा है, नश्वर शरीर पर गर्व करना व्यर्थ है।

(२)

नदी की बाढ़ में एक बड़ा भारी बरगद का पेड़ बहता हुआ चला जारहा था। एक स्थान पर उसने देखा कि बीच नदी में बेत के पौदे सुरक्षित खड़े हुए हैं। बरगद के पेड़ ने बड़े आश्चर्य के साथ बेत के पौदोंसे पूछा कि मैं इतना मजबूत होता हुआ एक किनारे पर खड़ा रहने पर भी उखड़ गया और तुम बीच नदी में जैसे के तैसे खड़े हो इसका क्या कारण है? बेत के पौदे ने कहा—तुम अकड़े रहते हो और हम झुक जाते हैं।

चरित्र निर्माण ।

(श्री पं० श्रीरामजी बाजपेयी)

—(❀)—

सही कहा गया है कि-हर आदमी अपने २ विचारों का पुतला है पहले विचार उठता है, तब उस पर अमल होता है। बार-बार अमल करने से आदत बनती है और आदतों से आचरण निर्माण होता है ।

बाज लोग सच्चरित्रता से यही मतलब निकालते हैं, कि 'आदमी दूसरे की बहू-बेटियों को अपनी ही माँ बहिन के समान देखता है, अथवा दूसरे की सम्पत्ति पर उसके मुँह में पानी नहीं आजाता।' यह बातें चरित्र में खास गुण होती हैं। मगर केवल इन्हीं दो एक बात से चरित्र नहीं ढलता। दुनियाँ की सभी अच्छी बातों के (जिनमें अपना, अपने समाज का अपनी जाति और देश का मंगल हो) संग्रह को चरित्र कहते हैं । चीजों का सही ढङ्ग से रखना, कपड़े कायदे से पहनना, दर्जा बदर्जा अपने छोटे बड़ों की आवभगत करना, वक्त की पाबन्दी, मान मर्यादा का हर दम विचार, उठना, बैठना, चलना फिरना सभी चरित्र निर्माण की सामिग्री हैं ।

कुछ लोग छिप कर काम करते हैं। छिपकर काम करने से उनमें और भी खराब बान पड़ती है और उसके द्वारा चरित्र दूषित होता है । अगर उन चोरों और डाकुओं से जो अपने पेशे की घोषणा करने में जरा भी नहीं शरमाते पूछा जाय तो वे बतावेंगे, कि उनकी यह कुटेव चुपके-चुपके और छिप कर काम करने से पड़ी ।

हर मनुष्य को चाहिए कि वह हर बात को सोचे और उस पर अमल करे बात भी ऐसी हो जिससे सच्चरित्र निर्माण हो । चरित्र वही है, जिसके द्वारा अच्छे विचारों की और अच्छे काम करने की आदत पड़ जाय ।

एक पकड़ और लड़लो !

दुनियाँ के सर्व प्रसिद्ध घूंसेबाज 'जिम कारबेट' ने अपनी सफलताओं पर प्रकाश डालते हुए "एक पकड़ और लड़लो" के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, वह कहता है कि 'जब निराशा और असफलता को घटायें चारों ओर से घिर आवें तो साहस को छोड़ मत बैठो, वरन् एक बार प्रयत्न करने के लिए जुट जाओ ।' सफलता देवी उसी के गले में बरमाला डालती है, जो बाधाओं से लड़ना और उन्हें परास्त करना जानता है ।

हममें से कितने ही व्यक्ति किसी कार्य को बड़े उत्साह से आरम्भ करते हैं, किन्तु कुछ भी दिनों में उसे छोड़ बैठते हैं। फिर दूसरा, तीसरा, चौथा काम आरम्भ करते हैं और उनको भी उसी प्रकार छोड़ते चले जाते हैं । जीवन भर असफलता, असन्तोष, निराशा की दीवारों से टक्करें मारते हैं और अन्ततः बेलज्जत जीवन लेकर बिदा होते हैं। भाग्य, दुर्दैव, क्रूर संसार, कह कर आत्म वंचना करने से काम न चलेगा, वरन् इस पराजय का कारण हमें गम्भीरता पूर्वक विचारना होगा ।

डी० डक्सन का कथन है कि 'सफलता अदम्य उत्साह और सतत् प्रयत्न की भगिनी है । वह सदा अपने भाइयों के साथ रहना पसन्द करती है।' आप यदि किसी कार्य को पूर्ण करना चाहते हैं तो विघ्न को देखकर डरिये मत। वरन् उनसे लड़ने के लिए तैयार हो जाइये। हर पराजय के बाद जिम कारबेट के सिद्धान्त पर आरूढ़ हूजिये-"एक पकड़ और लड़लो" । कुछ चिन्ता नहीं, यदि आपको बार बार असफल होना पड़ता है। आज आप किसी कार्य में असफल होगये हैं, तो निराश मत होओ । उठो, एक पकड़ और लड़लो, लड़ने वाले की ही विजय होती है।

पात्रता के अनुसार वैभव ।

राजा सगर के अनेक पुत्रों में से असमञ्जस नामक लड़का बड़ा ही दुष्ट प्रकृति का था। वह प्रतिदिन कुछ न कुछ उत्पात किया करता। कभी प्रजा के बालकों को उठाकर नदी में पटक देता, कभी अन्धों को खाइयों में धकेल देता, रास्ता चलने लोगों को नाना प्रकार में दुख देना, अकारण हत्या काण्ड, अग्नि काण्ड करते रहना उसका बाऐं हाथ का खेल था। मेरा पिता राजा है इस अभिमान ने उसे अन्धा बना दिया।

असमञ्जस के अत्याचारों से पीड़ित प्रजा व्याकुल होकर राज दरबार में पहुँची और अपनी कष्ट कथा कह सुनाई। राजा को पुत्र की ऐसी करतूतें सुनकर बड़ा दुःख हुआ। सगर स्वयं धर्मात्मा थे, वे धर्म नीति का राज्य करते थे, पुत्र को वे पहले भी अनेक बार समझा चुके थे, पर परिणाम कुछ न हुआ। जिनमें दुष्टता के गहरे संस्कार हैं उन्हें उपदेश या विनय से नहीं सुधारा जा सकता, ठीक रास्ते पर लाने के लिए तो उन्हें तो दण्ड की लाठी से ठीक करना पड़ता है।

न्याय सभा में असमञ्जस का अभियोग पेश हुआ। राजा ने स्पष्ट कह दिया कि सुधार के मेरे सब साधारण प्रयत्न बेकार होचुके हैं। अतएव कुछ विशेष व्यवस्था करनी चाहिए। दरबार के बिचारकों, पण्डितों और न्याय निर्णायकों ने गम्भीरता पूर्वक राजकुमार के उद्धत होनेके कारणों पर विचार किया तो वे सब इस निर्णयपर पहुँचे कि कुपात्र को उसकी योग्यता से अधिक वस्तु मिल जाने पर उसे अहङ्कार हो जाता है और उसी से गर्वोन्मत्त होकर वह निरंकुशता पूर्ण कार्य करने लगता है, राजकुमार की पात्रता बहुत कम है, पिता के अधिकार और वैभव को प्राप्त करके वह घमंड से चूर होगया। इसका सुधार तब तक नहीं होसकता जब तक नशा कराने वाली प्याली हाथ से न छीन ली जाय।

निर्णायकों ने फैसला किया कि आज से असमञ्जस के सम्पूर्ण राज्य अधिकार छीन लिये जाँय और इसे साधारण की तरह के वस्त्र देकर राज की सीमा से बाहर निकाल दिया जाय। फैसला उचित था, इस लिये सबको मान्य करना पड़ा। राजकुमार के राजसी वस्त्र छीन लिये गये और उसे तीन दिन के अन्दर राज्य की सीमा से बाहर कर दिया गया।

× × ×

बहुत समय बीत गया। राजा सगर को अपने पुत्र का स्मरण आया, उन्होंने उसका पता लगाने के लिये इधर उधर दूत भेजे। दूतों ने बड़े परिश्रम के बाद उसे ढूँढ निकाला और सारी सूचना राजा के पास पहुँचा दी कि राजकुमार अमुक स्थान पर है।

दण्ड का क्या परिणाम हुआ ? यह जानने के लिये राजा अपना भेष बदलकर अन्य दरबारियों के साथ उस स्थान पर पहुँचे और इस बात की जाँच की कि उसके विचार और कार्यों में क्या अन्तर हुआ है ?

सचमुच असमञ्जस बिलकुल सुधर गया था। उसके बिचार और कार्य पूर्ण रूप से बदल गये थे, अब वह एक भले मजदूर की तरह परिश्रम करके रोटी कमाता था और धर्म पूर्वक निर्वाह करता था। राजा सगर पुत्र को सुधरा हुआ देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उसे उठाकर छाती से लगा लिया। पुरानी आज्ञा को रद्द करते हुए उसे वापिस राज्य को लिवा लाये।

राजकुमार को साथ लेकर सगर लौट रहे थे। रास्ते में धर्म शास्त्री ने कहा—"पात्रता के अनुसार साधन सुविधा और अधिकार मिलने में मनुष्य सुधरता है और पात्रता से अधिक मिलने पर अहङ्कार के नशे में पागल होकर उद्धत होता है। इस लिये कुपात्र के पास यदि अधिक वैभव किसी प्रकार पहुँच गया हो तो उसे बल पूर्वक छीन लेना चाहिये, यही उसकी सर्वोत्तम सेवा है। असमञ्जस और सगर दोनों ही उस धर्म वचन के महत्ता स्वीकार कर रहे थे। पिता पुत्र दोनों ने न्याय व्यवस्था को प्रणाम किया और उनकी नीति व्यवस्था अत्यंत उपयोगी बताते हुए प्रसन्नता प्रकट की।

पतिव्रत धर्म ।

(तुलसीकृत रामायण से)

चौ०—कह ऋषि बधू सरल मृदु बानी ।
नारि धर्म कछु व्याज बखानी ॥
मातु पिता भ्राता हितकारी ।
मित प्रद सब सुनु राज कुमारी ॥
अमित दानि भरता बैदेही ।
अधम सो नारि जो सेव न तेही ॥
धीरज धर्म मित्र अरु नारी ।
आपद काल परखि अहि चारी ॥
वृद्ध रोग वश जड़ धन हीना ।
अंध बधिर क्रोधी अति दीना ॥
एकइ धरम एक व्रत नेमा ।
काय बचन मन पति पद प्रेमा ॥
जग पतिब्रता चारि विधि अहहीं ।
बेद पुरान संत सब कहहीं ॥

दो०—उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहउ समुझाइ ।
आगे सुनहि ते भव तरहिं, सुनहुँ सीय चित लाइ ॥

चौ०—उत्तम के अस बस मन माहीं ।
सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं ॥
मध्यम परि पति देखें कैसे ।
भ्राता पिता पुत्र सम जैसे ॥
धरम बिचार समुझि कुल रहई ।
सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहई ॥
बिनु अवसर भयते रह जोई ।
जानहुं अधम नारि जग सोई ॥
पति बंचक परि पति रति करई ।
रौरव नरक कलप सत परई ॥
छन सुख लागि जन्म सत कोटी ।
दुखन समुझ तिहि सम को खोटी ॥
बिनु श्रम नारि परम गति लहई ।
पतिब्रत धरम छांड़ि छल गहई ॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई ।
विधवा होय पाय तरुनाई ॥

अपने अन्दर ।

(सन्त—कबीर)

फाड़े दीदा मैं फिरों, नजर न आवै कोइ ।
जिहि घट मेरा साइयां, सो क्यूं छाना होइ ॥
सब घट मेरा साइयां, सूनी सेज न कोइ ।
भाग उन्हीं के है सखी, जिहि घट परघट होइ ॥
पावक रूपी राम है, घट घट रहा समाइ ।
चित चकमक लागै नहीं, धुंवा घुमड़ि रहि जाइ ॥
कस्तूरी कुंडलि बसै, मृग ढूंढै बन माहिं ।
ऐसें घट घट राम है, दुनियां देखै नाहिं ॥
कबीर खोजी राम का, गया जु सिंघलदीप ।
राम तो घट भीतर रमैं, जो आवे परतीत ॥
घट बढ़ कहीं न जानिये, ब्रह्म रहा भर पूर ।
जिन जाना तिन निकट है, दूरि कहें ते दूर ॥
मैं जाना हरि दूर है, हरि रहा सकल भर पूर ।
आप पहिचाने बाहरा, नियरा ही था दूर ॥
बहुत दिवस भटका रह्या, मन से विषै विराम ।
ढूंढत ढूंढत जग फिरा, तृण के ओटै राम ॥
ज्यों नैनन में पुतली, त्यों खालिक घट माहिं ।
मूरख लोग न जानहीं, बाहर ढूंढन जाहिं ॥
तूं तूं करता तूं हुआ, मुझमें रही न हूं ।
जब आपा पर का मिटगया, जित देखों तित तूं ॥
नीचे लोचन करि रहौं, जे साजन घट माहिं ।
सब रस खेलौं पीव सँग, किसी लखावौं नाहिं ॥
आपा मेट्यां हरि मिलै, हरि मेट्यां सब जाय ।
अकथ कहानी प्रेम की, कह्यां न कोई पतियाय ॥
कबीर नवै सो आपकों, परको नवै न कोय ।
डालि तराजू तोलिये, नवै सो भारी होय ॥
कबीर हम सबते बुरे, हम तजि भलो सबकोय ।
जिन ऐसा करि बूझिया, मीत हमारा सोय ॥
आठ जाम चौसठ घरी, तुम निरखत रहै जीउ ।
नीचे लोचन क्यों करौं, सब में देखो पीउ ॥

पाप का बाप।

तीन शूरवीर कहीं किसी कार्य वश जारहे थे। रास्ते में उन्होंने देखा कि एक यात्री को रास्ते में किसी ने मार कर डाल दिया है। इस घटना पर दुखी होते हुए वे आगे चले जारहे थे कि एक विधवा स्त्री दिखाई पड़ी जिसका सारा धन धान्य दूसरे लोगों ने छीन लिया था और उसे मार पीट कर घर से भगा दिया था। इस घटना से भी उन्हें बड़ा कष्ट हुआ। आगे चल कर देखते हैं कि वधिक लोगों ने बहुत से निरपराध पशु-पक्षियों को मार मार कर इकट्ठा कर लिया है। इससे आगे चले तो देखा क एक किसान का परिवार झोंपड़ी से बाहर पड़ा हुआ विलख विलख कर रो रहा है और जमीदार के आदमी लगान के लिए उसके बर्तन कपड़े तक उठाये लेजा रहे हैं और उन्हें बार बार मार पीट रहे हैं।

इन घटनाओं को देखकर उन तीनों का दिल पिघल गया और वे एक स्थान पर बैठ कर सोचने लगे कि दुनियां में इतना पाप कैसे बढ़ता जारहा है जिसके कारण लोग इस प्रकार दुखी होरहे हैं। इन्होंने विचार किया कि अपने कार्य को तो पीछे पूरा कर लेंगे पहले इस बात का पता लगावें कि यह पाप कहां से उत्पन्न होता है? इसका पिता कौन है? तब इस पाप को हटा देंगे। चारों इस बात पर सहमत हो गये और पाप के उत्पत्ति स्थान का पता लगाने के लिए चल दिये।

कितने ही दिनों तक वे निरंतर अपनी खोज में आगे बढ़ते गये पर कुछ पता न लगा। एक दिन उन्होंने एक बड़े अनुभवी और वृद्ध पुरुष को देखा। थके हुए तो थे ही उन्होंने सोचा कि शायद इसे पता होगा। उन सबने उस वृद्ध पुरुष से बड़ी प्रार्थना की, कि वह उन्हें पाप के बाप का पता बता दें। वृद्ध ने उँगली का इशारा करते हुए पर्वत की एक गुफा दिखाई और कहा—देखो, उस कन्दरा में पाप का बाप रहता है। पर सावधान! वह तुम्हें भी पकड़ न ले। चारों मित्र बड़े साहसी और अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थे। उन्होंने निश्चय किया कि ऐसे अधर्मी को दंड देना हम क्षत्रियों का धर्म है इसलिए चलते ही उसे मार डालेंगे जिससे पाप की होने पावे।

गुफा में पहुँच कर उन्होंने देखा कि वहाँ सोने के बड़े बड़े ढेर लग रहे हैं। सोना सोना इधर उधर पड़ा हुआ है और कितनी ही चट्टानें ऐसी हैं जिनमें से हजारों मन सोना निकल सकता है। अब वे अन्य सब बातों को तो भूल गये और इस सोच में पड़े कि इस सोने को घर कैसे ले जाना चाहिए। तय हुआ कि दिन में कोई देख लेगा इसलिए रात को इसे ले चलना ठीक होगा। इस समय भोजन करें और सुस्तालें। एक पहर रात जाने पर चल देंगे। यह निश्चय हो जाने पर दो साथी भोजन सामिग्री लेने चल दिये और तीसरा वहीं गुफा पर बैठकर अन्य व्यवस्थाऐं करने लगा।

अब तीनों के मन में सोने का लालच सवार हुआ और वे सोचने लगे कि यह बाकी दो मर जावें तो सारा सोना उसे ही मिल जावे। जब लोभ बढ़ने लगा तो पाप उनके मनों में उदय हो आया। जो दो साथी भोजन लेने के लिए जारहे थे उनमें से एक ने दूसरे के ऊपर तलवार से हमला किया और उसे रास्ते में ही मार कर छिपा दिया और खुशी से आगे बढ़ा। जो भोजन सामिग्री लाया था उसमें उसने तीसरे साथी के लिए जहर मिला दिया। जिससे इसे खाकर वह मर जावे। तिसरा उनका भी गुरु था। उसने एक एक करके उन दोनों को मार डालने का इरादा अलग ही पक्का कर लिया था।

जो साथी भोजन लाया था उसी ने बनाया भी, ताकि वह दूसरे के लिए जहर मिला सके। जब भोजन बनकर तैयार होगया तो तीसरे ने पीछे से उसके ऊपर छुरी से हमला किया और उसे वहीं ढेर कर दिया। अब वह अकेला बच रहा था और यह सोच सोच कर बड़ा प्रसन्न था कि सारा सोना मुझे ही मिल जायगा। उसने भर पेट भोजन किया, किन्तु भोजन से ज्यों ही निवृत्ति हुआ उसके हाथ पैर ऐंठने लगे और वहीं थोड़ी देर पैर रगड़ कर मर गया।

×

धन का आकर्षण बड़ा जबरदस्त है। जब लोभ सवार होता है तो मनुष्य अन्धा हो जाता है और पाप पुण्य में कुछ भी फर्क नहीं देखता। पैसे के लिए वह बुरे से बुरे कर्म करने पर उतारू हो जाता है और फिर स्वयं भी उस पाप के फल से नष्ट हो जाता है। जो व्यक्ति पाप से बचना चाहते हैं उन्हें लोभ से सावधान रहना चाहिए जब लालच के अवसर आवें तो बुद्धि को सतर्क रखना चाहिए कि मन कहीं ललचा न जावें। लोभ आते ही पाप की भावनाऐं बढ़ती हैं, क्यों कि पाप का बाप लोभ है। बाप के पीछे बेटा भी आता है। अन्याय पूर्वक द्रव्य लेने की इच्छा को लोभ कहते हैं।

संकट के समय में धैर्य रखना, उत्कर्ष के समय-दंड देने की शक्ति होते हुए भी क्षमा कर देना, सभा में वक्तृता देना तथा युद्ध में शूरता प्रकट करना मनुष्य के उत्तम गुण हैं। —चाणक्य.

जो अन्याय होता हुआ देखकर क्रुद्ध हो जाता है और अपमान सहन नहीं करता, वही सच्चा पुरुष है। जिसके मनमें क्रोध या तिरस्कार नहीं वह और नपुंसक समान ही है। —महाभारत.

नये वृक्ष लगाइए !

[श्री. मोरपंख वाले भक्त जी महाराज, गोवर्धन]

'वृक्षांश्छित्वा पशून्हत्वा कृत्वा रुधिरकर्दमम्।
यद्येवं गम्यते स्वर्गः नरकः केन गम्यते ॥' (चार्वाक)

'दशपुत्रसमोवापी दशवापीसमोह्रदः।
दशह्रदसमः पुत्रः दशपुत्रसमोद्रुमः ॥' (पराशर)

सभी मजहबों के धर्मशास्त्रों, ऋषि-मुनि तथा साधु-महात्माओंने वृक्ष लगाने को बड़ा धर्म माना है और बड़े-बड़े वैज्ञानिकों (Experts) व गवर्नमेन्ट के 'Meteorological', 'D. F. O', Departments द्वारा भी सिद्ध हो चुका है कि:—

१—वृक्ष जहाँ ज्यादा होते हैं वहाँ वर्षा अधिक होती है। वृक्ष जमीन से पानी खींचकर सूर्य को देते हैं। बादल बन जाने पर वृक्ष-समूह अपने आकर्षण से वर्षा को खींच लेते हैं।

२—वृक्ष गंदी हवा (Carbon dioxide) को सोखकर, शुद्ध-निरोग प्राण-वायु (Oxygen) देते रहते हैं। वृक्ष ही प्राणीमात्रका जीवन है।

३—वृक्ष सर्दी-गर्मी (Humidity) को घटने-बढ़ने नहीं देते।

४—वृक्ष अकाल और बाढ़ को रोकते हैं. इनके कटने से ही अकाल पर अकाल पड़ने लगे हैं।

५—वृक्ष प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाते हैं और अपनी हरियाली से नेत्र-रोगों को घटाकर, तरावट रखते हैं। मन और दिमागी शक्तियों को विकसित करते हैं।

६—वृक्ष फल-फूल-पत्र-मंजरी, औषधि-लकड़ी, चारा छाया-आश्रय आदि द्वारा मनुष्य, पशु, पक्षि सबको अनेक लाभ पहुँचाते हैं।

इस लिए हर धर्म प्रेमी व्यक्ति का कर्तव्य है कि नये वृक्ष लगाने व पुराने वृक्ष कटने से रोकने के लिए जो कुछ अधिक से अधिक प्रयत्न कर सके करता रहे।